# दो बहनों की कहानी

## (पुस्तक के कुछ अंश)

......कुछ पुराना सा शीर्षक है न। दो बैलों की कथा सा ध्वनित होता है। पर क्या करें एक के साथ दूसरे की बात आप से आप आ जाती है। एक की बात करो दूसरे की बात चलना लाजिमी हो जाता है। विवाह के बाद जहां मैं गई थी वह छोटा सा कस्बा नुमा शहर था और नया नया जिला बना था। वहां के सांसद पुराने धाकड़ नेता थे और उन्होंने विकास के नाम पर उस छोटे से कस्बे में कई फ्लाई ओवर बना दिये थे। मेरे ननद-ननदोई भी वहीं थे। प्रशासनिक हलकों की खबरें अक्सर सुनी सुनाई जाती थी क्योंकि मेरे ससुर जी भी पशुपालन विभाग के उपनिदेशक के पद पर पोस्टेड थे। बातों-बातों में पूर्व एस.डी.एम. और उनके पत्नी की भी बातें, अरे ये तो नंदिता दी हैं, अरे हां यहीं तो थीं वो। दो महीने पहले तक आप जानती हैं...?2 ननदोई जी आश्चर्यचकित थे
हाँ...हाँ....बेबी दी की फ्रेन्ड थी.......... आगे............

......कुछ पुराना सा शीर्षक है न। दो बैलों की कथा सा ध्वनित होता है। पर क्या करें एक के साथ दूसरे की बात आप से आप आ जाती है। एक की बात करो दूसरे की बात चलना लाजिमी हो जाता हैै। विवाह के बाद जहां मैं गई थी वह छोटा सा कस्बा नुमा शहर था और नया नया जिला बना था। वहां के सांसद पुराने धाकड़ नेता थे और उन्होंने विकास के नाम पर उस छोटे से कस्बे में कई फ्लाई ओवर बना दिये थे। मेरे ननद-ननदोई भी वहीं थे। प्रशासनिक हलकों की खबरें अक्सर सुनी सुनाई जाती थी क्योंकि मेरे ससुर जी भी पशुपालन विभाग के उपनिदेशक के पद पर पोस्टेड थे। बातों-बातों में पूर्व एस.डी.एम. और उनके पत्नी की भी बातें, अरे ये तो नंदिता दी हैं, अरे हां यहीं तो थीं वो। दो महीने पहले तक आप जानती हैं...?2 ननदोई जी आश्चर्यचकित थे हाँ...हाँ....बेबी दी की फ्रेन्ड थी..........हमारा घरेलू संबंध था। इनकी बड़ी बहन संचिता जो अपर कलेक्टर हैं? हाँ.... संचिता दी एक साल सीनियर थीं युनिवर्सिटी में बेबी दी से ननद और ननदोई से ही और भी बातें पता चली थीं नंदिता दी के पति जितने ही फ्लैक्सिबल अधिकारी थे उतने ही अड़ियल पति। उनके घर के नौकर चाकर, अर्दली, माली, आने जाने वाले कर्मचारियों से जो बातें निकल कर आती थीं उनसे उनका चरित्र किसी अनसिक्योर्ड साइको व्यक्ति का लगता। बात-बात में संचिता दी को झिड़कना, अपमानित करना, खाने की थाली पटकना, नौकरों के सामने ही हाथ उठा देना। कई बार पार्टी इत्यादि में डार्क मेक-अप के बावजूद उनके चेहरे के निशान छुप नहीं पाये थे। एक बार उनके हाथ में फैक्चर हो गया था। काम करने वाली महरी ने पड़ोसियों को बताया......साहब ने हाथ मरोड़ दिया था मेमसाब का। उस समय नंदिता दी के बारे मेंें वो सब सुनकर बहुत अपसेट हो गई थी मै। एकदम से दोनो बहनों का चेहरा आँख के आगे नाचने लगा था याद आ गई थी संचिता दी- ए मैडम जी..... तनी पानी पी के आवत तानी 'हमनी के'। ठेठ भोजपुरी में कहा जाता........... उधर मैडम लिसन लिसन कहती रहती उधर संचिता दी क्लास के बाहर.....पूरी क्लास ठहाकों मंे लहालोट। मैडम की लाल आँखों को धता बता अगले ही पल संचिता दी, "हमनी के आ जाई......मैडम जी" कहती क्लास मेे दाखिल, फिर ठहाकों का दौर। वह गोरखपुर का शायद पहला और सबसे पुराना गर्ल्स स्कूल था जो पूर्णतः मिशनरी था। हर प्रतिष्ठित परिवार का अपने लड़कियों के लिए पहली प्राथमिकता मेेंं इस स्कूल का नाम होता। संचिता दी के पापा प्रमोटेड आई.ए.एस. थे। खासे रसूखदार। पर दोनों बहनों में जमीन आसमान का अंतर था। खूबसूरत तो दोनों ही थी। भक्क गोरी, लम्बी और सुधड़ नाक-नक्शा। पर जहाँ संचिता दी थी जहीन, धाकड़ व्यक्तित्व की स्वाभिमानी, वहीं नंदिता दी थी औसत। पढ़ाई लिखाई स्वभाव, हर चीज में धीमे। उनके व्यक्तित्व में सौम्यता नहीं दब्बूपना झलकता। पीछे चलने वालों जैसा एटीट्यूड। पर संचिता दी तो थी अग्रणी कभी पीछे चलने वालों में नहीं हमेशा कमांडिंग। 1986-89 तक युनिवर्सिटी के इतिहास विभाग का शायद ही कोई ऐसा हो जो उन्हें भूला हो। अपनी तरह की एक

ही थी वो। दूर से ही दीदी को हाँक लगाती ''ऐ बेबिया कहाँ बालू आज कल........ दिखइये नाही देत बालू....... चाची लोग ठीक बाली न'' सड़क पर खड़ी हो बतियाने लगती। ऐसे ही एक बार पास से गुजरते एक लड़के ने उनकी खिल्ली उड़ाने वाले अंदाज में कमेंट पास किया था और वह तुरंत पलट कर उस लड़के ने उनकी खिल्ली उड़ाने वाले अंदाज में कमेंट पास किया था और वह तुरंत पलट कर उस लड़के को रोक ललकारते हुए अपनी कांवेंटी इंग्लिश में अच्छा खासा लेक्चर सुना डाला था। आखिर स्कूल के हर डिबेट कम्पटीशन की विजेता रही थी वो। तभी तो सिस्अर डीना की फेवरिट थी। उनकी फर्राटेदार इंगलिश सुन उन महाशय के चेहरे की जो रंगत हुई उसे याद कर अगले कई दिनों दीदी लोग ठहाके लगाती रही थी। ऐसी थी संचिता दी। किसी भी परिस्थितियों को आसान बना देने वाली। कहीं भी भिड़ जाने वाली। पूरा लड़ाका। उनकी दबंगई की कुछ यादें तो अब भी चेहरे मुस्कान ला देती हैं। हम सब जुबली टॉकीज में 'राजू बन गया जेन्टल मैन' देखने गयी थीं। खचाखच भरा हाॅल। उन दिनों हम सभी सहेलियाँ शाहरूख की दीवानी थीं। भारी एक्साइटमेंट था पर फिल्म शुरू होने के कुछ देर बाद ही दिमाग खराब हो गया। कुछ शोहदे पीछे बैठे थे पीछे से पैर लगाते, कमंेट पास करते। सीट पर बैठे रहना कठिन हो रहा था पर अगले ही पल अंधेरे हाॅल में संचिता दी की कड़कती आवाज गूँजी ''ठीक से बइठी रउरा सब नाहीं त हमनीं के ठीक से बइठावल आयेला''। हमने क्या किया लड़कों नें तेवर दिखाने चाहे। जब चप्पल पड़ी न त कुल याद आ जाई सोझे से बइठ के फिलम देखे के हा त बताव नाहीं फिर हमनीं के तोहरा सभन के फिलम दिखाईं उसके बाद किसी ने चूँ नहीं की। यँू भी संचिता दी शाहरूख की दिवानी थी भला फिल्म में व्यवधान वो कैसे सहती। शाहरूख की फिल्म वो पूरा मगन होकर देखती। आज भी याद है जब दीवाना लगी थी। टी.वी. पर फौजी और सर्कस देखकर पगलाई हुई थी जब कभी लाइट गोल होती वो बिजली विभाग पर गालियों की बारिश कर देती। दीवाना बड़े उत्साह तक तो शाहरूख दिखा नहीं मायूस हुई बैठी रहीं। जैसे ही शाहरूख की एंट्री हुई हुर्रे करते हुए चिल्ला पड़ी फिर दे सीटी पर सीटी। कुल मिलाकर उनके रंग ढंग ऐसे कि लड़के भी पानी भरें। कोई लड़का उनके पास फटकता भी नहीं था सिवाय अभय भइया के। लम्बे कसरती बदन के अभय भैया उनकी बुआ की तरफ से रिश्तेदारी भी आते थे। अच्छी खासी जमींदारी थी पर आई.एस.एस. का भूत सवार था। बीए, एल.एल.बी. इलाहाबाद से किये। अभी और कई साल रहते वहाँ पर पिताजी का देहान्त हो जाने से उन्हें गोरखपुर वापस आ जाना पड़ा। फिलहाल उन्होनें भी एम.एम. इतिहास में संचिता दी के साथ ही दाखिला लिया था। संचिता दी के लिए उनकी आँखों में स्नेह गाहे-बगाहे छलक सा जाता था और इस छलकने को वो रोकते भी नहीं थे। संचिता दी भी उनके सानिध्य में बड़ी कम्फर्टेबल रहती थी। विश्वविद्यालय में लगभग सभी ने मान लिया संचिता और अभय जरूर जीवन साथी बनेंगे। दो बातें लगभग तय थी- अभय भइया का आई.ए.एस. बनना और संचिता दी के साथ उनकी शादी। पर, दोनों ही बातें शायद विधि को मंजूर नहीं थी कई बार सामने बिल्कुल साफ दिखती चीजें भी दरअसल वैसी नहीं होती जैसी दिखती हैं। संचिता दी की शादी में हम सब

गये थे, मैं और मेरी सहेलियां, बेबी दी और उनकी सहेलियाँ - संचिता दी के क्लास मेट्स। पर अभय भइया नहीं आये थे। संचिता दी, गोरी भक्क, और कहाँ जीजाजी बिल्कुल तवे का उलटा। पी.सी.एस. अधिकारी जैसी कोई बात व्यक्तित्व में भी नहीं थीं। न चाहते हुए भी अभय भइया का चेहरा आँखों के आगे आ जा रहा था। ष्शादी के बाद एक बार आई थी संचिता दी हमारे घर। पूरी छन-बन बनी हुई, कलाइयों तक चूड़ियां, भारी साड़ी पीले सिंदूर से भरी मांग, जेवरो से लदी फंदी। आते ही आलता लगे पाँव उठा कर सफेद चद्दर बिछे पलंग पर बैठ गई थी- ''अब मेरी शादी का कुछ खामियाजा आप लोग भी भुगता न'' - जब मल-मल कर चादर का रंग छुड़ाआगे तब न चाहते हुए भी हम याद आयेंगे।'' अम्मा ने वो चादर वैसे ही उठाकर रख दी थी संचिता दी के आलता लगे पेैरों की छाप को धुलने देने में उन्हें अपशगुन सा लगा था। आज भी शायद अम्मा के किसी पुराने बक्स में वो चादर जब की तस पड़ी हो। बेबी दी की शादी नंदिता दी से पहले हुई थी। नंदिता दी की शादी में बेबी दीदी दिल्ली से आयी थीं'--उसी शादी में संचिता दी से भी मिले थे हम लोग। साधारण शादी-शुदा लड़कियों जैसा एटीट्यूड था उनका - पति और बच्चों में मगन स्त्री। उच्च अधिकारी पति, दो प्यारे बच्चे - उनकी मम्मी हंसती - उ त ठीक भइल बहनी - जो लइके संचितवा के रंग पइले बान --- नाही त नाने के लइकन जइसन लगत कुल'' पता नहीं क्यों मुझे संचिता दी का वो सुखी स्त्री वाला रूप भाया नहीं था। सच विवाह-लड़कियों को खा जाता है पूरी तरह। संचिता दी-भाने बिंदास, बेधड़क लड़की जो हर लाइन की धज्जी उड़ाती थी- अपनी स्वतंत्र सोच, स्वतंत्र व्यक्तित्व.... कैसे तो हाँजी, हाँ जी मार्का ठस्स औरत में तब्दील होती जा रही थी। इधर माँ और चाची लोग तो ठंडी साँसे भर रही थीं उनके ठाठ-बाट देख - आर.बी. सिंह जी ने अपनी दोना बेटियों के लिए अफसर दामाद ढूढ़े, राज करेंगी बेटियां। गाड़ी, बंगला, नौकर-चाकर, रूपया, गहना आखिर लड़कियों के लिए इससे ज्यादा सुख आदमी क्या चाह सकता है। अम्मा लोग उसी जमाने की थीं जब लड़कियों के लिए आई.ए.एस., पी.सी.एस. लड़के मिलना मानो उनके भाग जगना, इंजीनियर, डाॅक्टर, भी ऊँची हैसियत वालों के लिए रिजर्व होते। हम जैसे मध्यमवर्गीय परिवारों की लड़कियों के लिए प्रोफेसर, बैंक कर्मी जामाता मिलना बड़ी बात होती थी-। फिर, बीच के कुछ वर्ष चुपचाप चले गये, हाँ, गोरखपुर आने पर बेबी दीदी मुझे लेकर संचिता दी के घर जरूर जाती थी, कभी संचिता दी आयी होती तो, उनसे मुलाकात हो जातीं--कभी नंदिता दी से भी। अक्सर ऐसा होता कि नंदिता दी और बेबी दी कमरे में बंद हो जाती मुझे बोरियत होती--- आखिर बच्चों के साथ कितनी देर मन बहलाती --- फिर नंदिता दी की मम्मी का घुमा-फिराकर मेरी शादी की बाबत पूछना भी मुझे नहीं सुहाता था। अब शादी में देरी हो रही थी तो मैं क्या कर सकती थीं--- पापा देख तो रहे हैं। सब लड़कियों की तरह एम.ए. करते न करते मेरी शादी नहीं हो पायी तो कौन सा आसमान फट पड़ा--- यूँ भी देख तो रही हूँ इन सभी शादी शुदाओं को, सब की सब यूँ हो गई हैं मानो शादी से पहले की उनकी जिंदगी किसी दूसरे जनम की बातें हों। नंदिता दी से मिलकर आने के बाद बेबी दो क्यों गुमसुम सी हो जाती थी, अब इतने वर्षों बाद जान पायी। बेबी

दीदी कितनी बकबकही थी, अम्मा कहती - पेट में पानी नहीं पचा सकती ये लड़की- । पर अपनी सहेली की बातें कैसे तो पचा गई थी-- लेकिन नंदिता दी क्यों सहती थी -अपनी बड़ी बहन से कुछ सीखा उन्होंने? शादी के चैदह सालों के बाद पी.पी.एस. क्वालीफाई किया था उन्होंने-- ये खबर मैंने भी सुनी थी और उनके लिए संतोष से भर गई थी। आजकल के बच्चे वैसे कुछ मनचाहा कर लेने, पा लेने पर कहते हैं न चमक कर - यस'। बस वैसी ही कुछ अनुभूति हुई थी मुझे संचिता दी को लेकर --- लगा था मै भी बच्चों की तरह जोश से बोलूं यस- ये हुई न बात। ''अरे? गुड्डी। ''बेटे के स्कूल का वार्षिकोत्सव था वहाँ संचिता दी चीफ गेस्ट थी। स्कूल के इन्विटेशन कार्ड पर उनका नाम था। वह इस शहर मंे है मुझे पता था--- पर इतना बड़ा शहर, और फिर पतिदेव का स्वभाव ऐसा था कि --- मेरे मायके तरफ के परिचितों से मिलने-मिलाने में उनकी कोई रूचि नहीं। विवाह के बाद लड़कियाँ बदल जाती हैं, ये तो खूब देखा सुना था, पर, क्यों बदल जाती हैं, इसकी दीक्षा और विवाह के बाद बखूबी मिल गयी थी। उनका मुझे इस तरह पुकारना और फिर बेहद आत्मीयता से ठेठ भोजपुरी में ही हाल-चाल पूछने लगना, आस-पास खड़े लोगो को न सिर्फ....हैरान कर रहा था बल्कि, अचानक से बेटे के स्कूल में मैं महत्वपूर्ण बन उठी थी। उनका आत्मीयता से ये कहना, ''तुम्हें मालूम था न मैंे यहाँ हँू.....फिर मिलने क्यों नहीं आई......'' मुझे संकोच से भर गया। ''आप व्यस्त रहती होगी ये सोचकर ....'' अपना पता दो ......इस संडे गाड़ी भेज दूँगी.... नो कोई बहाना नहीं चलेगा.....'' संडे ठीक बारह बजे उनका ड्राइवर आ गया, पति और बच्चों के बिना ही मैं गई। पतिदेव ने पहले ही मना कर दिया था और पहली ही बार बच्चों के साथ मैं जाना नहीं चाहती थी। अकेले जाना एक तरह से मेरे लिए अच्छा ही था। संचिता दीदी और जीजाजी ही थे। जीजाजी कहीं निकलने वाले थे। दीदी सुधड़ गृहणी की तरह नौकरों को निर्देश दे रही थी......जीजाजी बीच-बीच में मुझसे भी बतिया रहे थे। सबकुछ एक नार्मल फैमिली की तरह ही था। सच, अफवाहें भी क्या गजब ढाती है। संचिता दी और एक्स्ट्रा मैरिटल अफेयर। सोचा भी नहीं.....जाता, उनकी शख्सियत तो ऐसी रहीं थी कि, अगर ऐसा कुछ होता तो निश्चित ही उसकी कुछ परिणती भी होती। आधा-अधूरा कुछ उनको सूट नहीं करता था। ''अच्छा साली साहिबा......मैं चला, अब आप अपनी दीदी से जी-भरकर गप्पे मारिये। इन्होंने खास आपके लिए ही आज छुट्टी ली है, वर्ना हम लोगों की छुट्टी कहाँ।'' कहकर जीजाजी चले गये। ''दस मिनट में मैं आयी'' कहकर दीदी बाथरूम में घुस गयी नहाकर आयी तो ढीले कुर्ते, सफेद सलवार में खूब फ्रेश लग रही थी। आकर सोफे में मेरे पास ही धस गयी......सबकी खोज खबर लेती रही, बेबी दीदी की चाची लोगों की अम्मा की। मेरे भीतर भी ढेरो प्रश्न थे, उनको लेकर नदिना दी को लेकर, इधर-उधर से सुनाई पड़ जाती, अफवाहों को लेकर लगा अभी पूछ लूँ क्या पता ये एकांत फिर जुटे न जुटे। मैंेने कुरेद दिया और दीदी शुरू हो गयीं,'' तोहके मालूम न बटले होइ.....पापा हमनी खातिर आइएसे, पीसीयसे, दामाद खोजत रहन.....घर खानदान, पर्सनैलिटी कुछु नाहीं......बस्स लइका अफसर हो। साधारण खेतिहर घरै के लइका रहन तोहार जीजा.....ऊपर से शक्लो-सूरत व देखते बालू........रावण

के खानदान से तनिको बेसे नाहीं लागेन। “क्या दीदी.......आप भी।” वह हो हो कर के हंस पड़ी। “हमार फोटो, एजुकेशन और पापा का पद देखले के बाद नाही के गुंजाईश रहबे नाही कइल..... बस्स बियाह हो गइल..... हमहूँ शक्ल सूरत से ज्यादा पढ़ाई-लिखाई पर जात रहनी। लेकिन बहुत जल्दी समझ में आ गइल कि बड़का पढ़ाई पढ़ले से आदमी के बड़मनई होये के गारंटी नहीं हवेला......बहुत जल्दी तोहरे जीजाजी के असली चेहरा हमरे समझ में आ गइल। हमार बड़ाई हमार सराहना...... इनके बरदाश्त से बाहर लगे........ इंफिरियालिटी काॅम्पलेक्स और इनसिक्योरिटी दुनों के भयानक काॅम्बिनेशन है उनके में। बात-बात में झिड़कना, नीचा दिखाना, अपनी पढ़ाई अपने रूतबे की डींगे हांकना। याद है, शादी से पहले मैं कैसे गलत होते देख लड़ पड़ा करती थी। माँ इसके लिए हमेशा मुझे फटकारती क्या जरूरत दूसरो के फटे में टांग अड़ाने की? पर, अन्याय होता देख चुप लगा जाना इसलिए कि वे अन्याय मेरे साथ नहीं किसी ओर के साथ हो रहरा है..........ये तो मेरी फितरत ही नहीं थी। पर अब तो ये था कि दूसरे को क्या कहूँ अपने साथ ही कुछ सही नहीं कर पा रही थी। विरोध करने, तर्क करने पर वो सभ्यता की सारी सीमा लांघ जाता था, घर वालों, नौकरों, बच्चों के सामने ही बेइज्जत होती थी। मन मारकर चुप रहने लगी। लगा सरेंडर कर देने से शायद हालात सुधरे.....पर उसका रवैया नहीं बदला। बच्चे बड़े हो रहे थे.....पिता की देखा-देखी वे भी मुझसे ढंग से बात नहीं करते। उनका टिफिन तैयार करना, उनके कपड़े धुले प्रेस किये हो....उनके जूते पाॅलिस हुए रहें....... उनका होमवर्क समय से पूरा हो जाये.......बस्स उनकी जिंदगी में भी मेरी यही अहमियत बन गयी थीं। ये एक फैक्ट है.....घर वैसा ही होता है, जैसा घर का मालिक होता है.......और घर का मालिक हमेशा पुरूष ही होता है। “पता है, जब कभी पुरानी बातें पुराना एलबम या ऐसा कुछ याद आता तो मन में टीस उठती, मैें क्यों होती जा रही हूँ ऐसी? लगता पहले वाली संचिता गुम हो गयी है और गला फाड़ कर चिल्ला रही है, कुछ समझ में नहीं आता क्या करूं ऐसा कि अपना आप मुझे मिल जाय। मेरे पास सब कुछ था, अच्छी भली गृहस्थी, बच्चे.....समृद्धि से भरा जीवन..... पर शायद ही ऐसा कोई दिन हो जब मैंने अपने आपको भूला हुआ न पाया हो...... हर दिन मैैं अपने आपसे हजारों प्रश्न करती। विश्वास करोगी? अपने अस्तित्व की पहचान के लिए मैने एक बार घर के पास एक स्कूल में महज सात सौ रूपयों की नौकरी की। पतिदेव ने उसकी भी हंसी उड़ाई। एक दिन उसे भी छोड़ आई....पतिदेव के व्यंग या तानो से नहीं, बल्कि चार दिन की छुट्टी के एवज में स्कूल प्रबंधन ने सौ रूपये काट लिये थे। इतना अपमान लगा कि फिर गई ही नहीं।” “पर घर के भीतर रोज व रोज अपमानित होना असह्य था। ये ख्याल जीने नहीं देता कि मैं अपना पालन पोषण स्वयं नहीं कर सकती, रोटी और छत, के लिए अपने आपको इस तरह जलील होने देती हूं। पढती खूब थी लगा, अब सीरियसली पढ़ूं.....मायके आयी तो वापसी में किताबों से भरा बैग भी ले आयी। प्रतियोगी परीक्षाओं से संबंधित पत्रिकाये मंगाने लगी। पतिदेव को बताया कि बड़े हो रहे बच्चांे के लिए है ये। समाचार ध्यान से पहले भी सुनती थी, करेंट अफेयर्स की नाॅलेज से अपने को अपडेट रखने की आदत पहले भी

थी....ये सब अब काम आ रहा था। पति की नौकरी की सहूलियतें कम नहीं थी। घर में हर काम के लिए चपरासी और सबसे बड़ी राहत कि पति महोदय घर में रहते ही नहीं थे....कभी दौरे पर, की मिटिंग में.......मैं निश्चित हो कर पढ़ती........ज्यादातर दिन में, कोशिश करती बच्चों के रहते किताबें, नोट्स, न खोलूं। पति और बच्चों के रहते किताबें छिपी रहतीं.....। एक फैक्ट और पता चला- हर औरत अपने ही घर में अपना एक छुपा हुआ कोना जरूर बनाती हैं........एक ऐसी भेद भरी जगह जिसका पता उसे अपनों से ही छुपाकर रखना होता है। मैने पति को झिकझिक या गुस्से पर ध्यान देना बंद कर दिया था। ........कोशिश करती उन्हें पलटकर जवाब न दूँ और यथा संभव उनके सामने उनकी मन चाही दुम हिलाती पालतू कुतिया जैसा एहसास उन्हें दिलाऊँ। दो वर्ष मैंने जमकर मेहनत की.......एक वर्ष तो पाठ्यक्रम समझने, उससे संबंधित पढन सामग्री को इकट्ठा करने में ही लग गया। एक वर्ष बाद जब मुझे पूरा काॅन्फिडेंस हो गया। तभी मैंने एक्जाम के फार्म भरे.........इसकी इजाजत भी पति से ली....''मेरा मन है एक बार तक .......असफल रही थी.....पतिदेव ने इस बार भी दरियादिली दिखाई....... ताकि उनके तानो के तरकश में एक तीर और शोभा बढ़ाए। खैर ....... मैंने परीक्षा दी ..... और आश्चर्य पहली ही बार में प्रीलिम निकाल लिया। एकदम से घर का माहौल बदल ही गया। पतिदेव तो शाॅक्ड थे और बच्चे। अचानक मेरा स्टेटस उनकी नजर में बढ़ गया। एक फैक्ट और पता चला - घरेलू औरतें सारी जिंदगी आचार, पापड़, बड़िया बनाते भले गुजार दे....... भोर से लेकर देर रात तक घर के प्रत्येक सदस्य की जरूरतों को लेकर जूझती रहें ...... पर उन्हें वो सम्मान कभी नहीं मिलता जो एक अदद नौकरी दिलाती हैै। अब तो बच्चे मुझे पुश करते ........ वो बड़े हो रहे थे, नयी से नयी करेंट बातें मुझ तक पहुँचाते और ........ फिर मेरी याददाश्त की जाँच करते ........ और उसी दौरान एक और फैक्ट की डिस्कवरी की मैंने .....औरतें सिर्फ अपने पति और बच्चों की निगाह में .... अपनी जगह तलाशती है। कोई और पद-प्रतिष्ठा इस इक जगह से निचले पायदान पर ही होती है। बहरहाल, एक्जाॅम मैंने पास कर लिया ...... आज इस पद पर हूँ ..... ''संचिता दी ने एक गहरी लम्बी सांस ली। 'लेकिन ......... बाकी बातें ....... आपके बारे मंे वो सब .......? ''देखो यार, औरतें चाहे जहां पहुंच जाये ...... आदमी की निगाह में वो सिर्फ एक मादा ही होती है ........ ये भी एक फैक्ट ही है। किसी से हँस बोल लो तो बाते बनते देर नहीं लगतीं ........ अब वो प्रकरण शान्त हो गया है।'' ''और नंदिता दी........'' मैे सबकुछ जान लेना चाहती थी फिर जाने कब ऐसा सुयोग जुट ..... फिर जाने कब दी इस मूड में मिलें। ''लगता है, कोई कहानी लिखने का आइडिया आ गया है तेरे दिमाग में ........'' ''दीदी, बताइये न नंदिता दी के बारे में, कैसी है, कहाँ है? वै? वैसी ही है---जैसा कोई हो सकता है जल्लाद आदमी को सहते हुए, मुझे तो उस पर इतना गुस्सा आता है---पर उसे लगता है पीड़ा में प्लेजर मिलता है। अपनी कारा हर व्यक्ति को खुद तोड़नी होती है। हम दोनों की परवरिश एक जैसी हुई, एक जैसी शिक्षा, और एक जैसी शादी। कोई नहीं कह सकता कि उनके साथ भेद-भाव हुआ है, किस्मत देख, दोनो के पति काले-कलूटे और इक्वल पोस्ट पर, दोनों का मन

मिजाज भी एक जैसा --- दोनो पत्नियों को सेक्स पार्टनर और बच्चा पैदा करने की मशीन से ज्यादा तवज्जो नहीं देते। यूँ भी ज्यादातर मर्द, औरत को अपनी सेक्सुअल प्रापर्टी समझते हैं, सखा समान साथी सिर्फ एक फैंटेसी है, साथी बनते ही सखापन हेरा जाता है और यूँ भी सखा से ज्यादा मालिक बनना ही पुरूषों को आकर्षित करता है।'' ''अपनी नियति हम औरतों को खुद तय करनी होती है---या तो छत और रोटी के लिए पालतू बन जाये या फिर अपने सम्मान के लिए, अपने मनुष्य होने के एहसास के लिए, अपनी छत और अपनी रोटी का जुगाड़ अपने श्रम अपने कौशल के सुपुर्द करें'' नंदिता को पालतू बन जाता ज्यादा आराम दायक लगता होगा - क्या हुआ जो कभी-कभार, पति ने दो चार तमाचे जड़ दिये --- या बांह मुरेड़ दी --- या चेहरे पर पड़े काले निशान छुपाने के लिए अतिरिक्त मेक-अप करना पड़ा---'' ''दीदी---आप हमेशा से मेरी रोल मौडल रही है---आपको सैल्युट करने को जी चाहता है ----'' नंदिता दी के लिए उदासी महसूस करने के बावजूद संचिता दी के जज्बे के प्रति आदत भाव व्यक्त करने से मैं खुद को रोक नहीं पायी - आखिर कितने होते हैं ऐसे जो स्वयं को साबित कर पाते हैं -? '' अरे, मैं अकेली नहीं जो शादी के पन्द्रह साल बाद अधिकारी बनी हूँ --- मेरे साथ ही थी ट्रेनिंग में चचल जी --- उन्होंने भी शादी के 15-16 वर्षों बाद ये परीक्षा पास की थी, बस हमारी कहानी में डिफरेंस ये था कि मैने पति की प्रतारणा के विरोध स्वरूप इधर का रास्ता अपनाया ---और उन्होंने पति के सहयोग और प्रोत्साहन से ---तो यार इसी दुनिया में हर तरह के लोग हैं----अब साली अपनी किस्मत ही धोखा दे जाय, तो किसे दोष दें---। कहकर वह मुक्त हँसी हंस दी थीं ---। आज भी उनकी वो हंसी उनके वो फैक्ट्स याद कर मेरे होठ मुस्कुराहट में फैल जाते हैं पर अगले ही पल वह मुस्कुराहट सिमट कर उदासी में परिवर्तित हो जाती है-- नंदिता दी जो याद आ जाती हैं-